International Journal of Multidisciplinary Research and Development
Online ISSN: 2349-4182, Print ISSN: 2349-5979, Impact Factor: RJIF 5.72
www.allsubjectjournal.com
Volume 4; Issue 4; April 2017; Page No. 258-261

भारत की परम्पराओं : विधवा पुनर्विवाह में फंसी नारी

डॉ0 अर्चना मिश्रा
एम0ए0, पी–एच0डी0 (इतिहास), अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा, मध्य प्रदेश, भारत।

सारांश
ऋग्वेद में विधवा शब्द का प्रयोग अनेक बार हुआ है।[1] बौधायन धर्मसूत्र में उल्लेख मिलता है कि विधवा को एक वर्ष तक मधु, मांस, मदिरा तथा नमक का सेवन नहीं करना चाहिए तथा भूमिशयन करना चाहिए।[2] मनुस्मृति के अनुसार पति की मृत्यु के बाद विधवा को पुष्प, फल एवं मूल खाकर शरीर को गला देना चाहिए। किसी अन्य व्यक्ति का नाम भी नहीं लेना चाहिए। मृत्युपर्यंत संयम, व्रत, सतीत्व की रक्षा करते हुए पतिव्रता के सदाचरण एवं गुणों की प्राप्ति की चेष्टा करनी चाहिए। यदि विधवा अविवाह के नियम पर चलते हुए सतीत्व की रक्षा करती रहे तो वह पुत्रहीन होते हुए भी स्वर्ग को प्राप्त कर सकती है। जैसा कि प्राचीन नैष्ठिक ब्रह्मचारी सनक ने किया था।[3] कात्यायन ने पत्नी को पति के संपत्ति का मृत्युपर्यंत अधिकारी माना हैं उसे दान आदि कर स्वर्ग प्राप्ति का विधान किया है।[4]
वृद्धहारीत के अनुसार विधवा को बाल नहीं संवारना चाहिए। पान, गंध, पुष्प आभूषण एवं रंगीन परिधान का प्रयोग नहीं करना चाहिए। पीतल, कांसे के बर्तन में भोजन न करे। दो बार भोजन करे। अंजन का प्रयोग न करते हुए श्वेत वस्त का उपयोग करे। इंद्रियों एवं क्रोध का दमन करना चाहिए। भगवान की आराधना करें। रात्रि में पृथ्वी पर कुश की चटाई पर शयन करे। मनोयोग एवं सतसंगत में लगा रहना चाहिए।[5]

ताम्बूलाभ्यज्जनं चैव कांस्यपात्रे चभोजनम्।
यतिश्च ब्रह्मचारी च विधवा च विवर्जयेत।।

हर्षरचित में उल्लेख मिलता है कि विधवायें आँख में अंजन, मुख पर पीला लेप नहीं करती थीं। अपने बालों को ऐसे ही बांध लेती थीं।[6] विधवा को अमंगल सूचक माना जाता था। विधवा का आशीर्वाद कोई विज्ञजन ग्रहण नहीं करता मानो वह सर्प विष हो।[7] विधवा के कबरीबंध (केशबंध) से पति बंधन में पड़ता है। अतः विधवा को अपना सिर मुंडित रखना चाहिए। एक बार भोजन, मास भर उपवास तथा चंद्रायण व्रत रखना चाहिए। विधवा का पर्यन्क शयन पति को नरकगामी बनाता है। उसे सुगंधित लेप से दूर रहना चाहिये। विधवा को प्रतिदिन तिल, जल, कुश से पति, पिता के पिता तथा पति के पितामह के नाम एवं गोत्र से तर्पण करना चाहिए। उसे मरते समय भी बैलगाड़ी में नहीं बैठना चाहिए। कंचुकी नहीं पहननी चाहिए। रंगीन परिधान नहीं धारण करना चाहिए। वैशाख, कार्तिक एवं माघ मास में विशेष व्रत रखना चाहिए।[8]
निरुक्त में विधावनाद व इति चर्मशिराः में चर्मशिराः को मुंडित विधावा का द्योतक मानते हैं। इसी प्रकार आरस्तम्बमंत्र पाठ में विकेशी शब्द का अर्थ मुंडित विधवा किया गया है।[9]
पी.के. काणे उपर्युक्त अर्थ को युक्ति संगत नहीं मानते उसके अनुसार विधवा का मुंडन शास्त्रसंगत नहीं है।[10] पी.के. काणे के अनुसार मुंडन की प्रथा 10वीं एवं 11वीं शताब्दी से आरंभ हुई। कालांतर में विधवाएँ यतियों के समान मानी जाने लगीं। यति लोग अपना सिर मुड़ाया करते थे। अतः विधवाएँ भी वैसा करने लगीं। चुल्लवर्ग से ज्ञात होता है कि बौध साधुनिया (भिच्छुणियां) सिर से केश कटा डालती थीं और नारंगी रंग की (विच्छिल) परिधान धारण करती थीं। इस प्रथा से मुंडन की प्रथा को बल मिला होगा।[11] जैन साधुनियाँ अपने केश काट डालती थीं या उन्हें नोच डालती थीं।[12]
विधवा का सांसरिक जीवन में रहना संभव न होने के कारण साधु के समान त्यागमय जीवन का विधान किया गया होगा। यदि वे श्रृंगार का प्रयोग करती, आकर्षक दिखाई देती, तो अनेक अनैतिक प्रश्न उपस्थित होने की आशंका थी। अमंगल घोषित करने से विधवा से एक प्रकार की दूरी बनी रहती थी।

मूल शब्दः भारत, परम्परा, विधवा, पुनर्विवाह, नारी।

प्रस्तावना
प्राचीन काल में विधवा के लिए नियोग की व्यवस्था की गई थी। नियोग का अर्थ है कि किसी नियुक्त पुरुष के संभोग द्वारा पुत्रोत्पत्ति के लिए पत्नी या विधवा की नियुक्ति।[13] पति विहीन नारी गुरु की आज्ञा से देवर या सापिण्ड, सगोत्र, सप्रवर या अपनी जाति वाले पुरुष से केवल ऋतुकाल (प्रारंभ के चार दिन छोड़कर) में संभोग कर पुत्र प्राप्ति कर सकती थी। कुछ लोगों के अनुसार नियोग केवल देवर से तथा मात्र दो पुत्र प्राप्ति के लिये था।[14]

अपतिरपत्यलिप्सुर्देवरात् गुरुप्रसूता नर्तुमतियात।
पिण्डगोर्षि संबंधेभ्यों मोनिमात्राद्वा नादेवारदित्येक नातिद्वितीयम।

नियोग से उत्पन्न पुत्र को क्षेत्रज तथा उसकी माता को क्षेत्र कहा जाता है। उस स्त्री या विधवा का पति क्षेत्रिक तथा पुत्रोत्पत्ति के नियुक्त पुरुष बीजी या नियोगी कहलाता है।[15] नियोग का उद्देश्य केवल पुत्र प्राप्ति तक सीमित था। नियोजित पुरुष एवं नियोजित विधवा के मध्य कामुकता का भाव नहीं होना चाहिए। एक पुत्र प्राप्ति के बाद दोनों को श्वसुर तथा वधू सा व्यवहार करना चाहिये।[16] बृहस्पति ने द्वापर, कलियुग के लिये नियोग को वर्जित बताया है।

द्वापरे च कलौ नृणां शक्तिहीन विनिर्मिता।।
अनेकधा धृताः पुत्रा ऋषिभिश्च पुरातनै।;
न शक्यन्ते अधुना कर्तु शक्तिहीनैरिदन्ते।

विश्व रूप के अनुसार नियोग निकृष्ट तथा स्मृति विरुद्ध है। नियोग के विषय में स्मृतियसों की उक्तियाँ शूद्रों के लिए है। यह राजाओं के लिये तभी आज्ञायित था जब उत्तराधिकार के लिये कोई पुत्र नहीं होता था।[1] पति के भाई से विधवा विवाह तथा उससे

पुत्रोत्पत्ति एक विस्तृत प्रथा रही है।[18] निरुक्त में देवर का अर्थ द्वितीय वर किया गया है। मेधातिथि ने इसकी व्याख्या नियोग के अर्थ में की है।[19] गुप्तोत्तर काल में नियोग की प्रथा का प्रचलन कम ही था। बृहस्पति ने इसकी निंदा करते हुए कलिवर्ज्य बताया है। इसी प्रकार अन्य धर्मशास्त्रकारों ने नियोग की निंदा की है।[21]

उस विधवा के लिय पुनर्भू शब्द का प्रयोग किया जाता था जिसने पुर्नविवाह किया हो। नारद के अनुसार निम्न तीन पुनर्भू हैं–जिसका विवाह के पश्चात् समागम न हुआ हो और वह विधवा होने पर पुनः विवाह करती है। वह स्त्री जो अपने पति को एक बार छोड़कर अन्य भर्ती कर ले किन्तु पुनः अपने पति के पास चली आवे। जब कोई विधवा अपने देवर यसा अन्य सपिण्ड या उसके जाति को दो दी जाए। यह एक नियोग है जिसमें कोई धार्मिक कृत्य नहीं किया जाता है।[22]

द्वितीय विवाह तथा दूसरे पति से उत्पन्न संतान को पौनर्भव पुत्र की संज्ञा दी जाती है।[23] पाँच स्थितियों में धर्मशास्त्रकारों ने स्त्री को पुनः विवाह की अनुमति प्रदान की है। जब पति नष्ट हो जाये, मर जाय, सन्यासी हो जाय, नपुन्सक हो, पतित हो। (नष्टे मृत्यु प्रावजिते कलीवे च पतितेपतौ पंच स्वापत्सु नारीणाम् पतिरन्यों विधीयते।)[24] पाराशर माधवीय ने विधवा के पुनर्विवाह को कलियुग के अनुकूल नहीं बताया है।[25] मेधातिथि के अनुसार पति शब्द का अर्थ पालक है वे नियोग के विरोधी नहीं है किन्तु विधवा विवाह के पुर्नविवाह के कट्टर विरोधी हैं।[26] स्मृत्यर्थसार के अनुसार सप्तपदी के पूर्व ही यदि वर मर जाय तो कन्या का पुनर्विवाह होना चाहिए। यदि समागम के पूर्व पति मर जाय तो कन्या का पुनः विवाह किया जाय। यदि विवाहोपरान्त पत्नी के रजस्वला होने के पूर्व ही पति मर जाय तब कन्या को पुनः विवाह हो, कन्या के गर्भवती होने के पूर्व यदि पति की मृत्यु हो जाय तो पुनर्विवाह आज्ञापित है।[27] हरदत्त के अनुसार दूसरे की पत्नी से जिसका पति जीवित हो उत्पन्न किया हुआ पुत्र कुण्ड तथा उससे जिसका पति मर गया हो उत्पन्न किया हुआ पुत्र गोलक कहलाता है।[28]

ब्रह्मपुराण में कलियुग में विधवा विवाह निषिद्ध माना गया है।[29] अपरार्क के अनुसार बालविधवा या जो बलवस त्याग दी गई हो या किसी के द्वारा अपहृत हो चुकी है, उसके विवाह का नया संस्कार हो सकता है।[30] नारद के अनुसार यदि पति विदेश गया हो तो ब्रह्मण पत्नी को आठ वर्ष उसकी प्रतीक्षा करनी चाहिए। यदि उसको संतान न उत्पन्न हुई हो तो केवल 4 वर्ष तक प्रतीक्षा के बाद पुर्नविवाह करना चाहिये। क्षत्रिय तथा वैश्य के प्रतीक्षा के वर्ष कम निर्धारित हैं। यदि पति जीवित हैं तो दूजे वर्ष तक इंतजार करना चाहिए। प्रजापति के अनुसार यदि पति का कोई पता न हो तो दूसरा पति करने में कोई पाप नहीं है।[31]

विश्वरूप के अनुसार पिता कन्या का दान तब भी करता है जब वह अक्षत योनि न भी हो। विधवा के पुनर्विवाह में पिता का ही गोत्र देखा जाता था।[32] (कन्याप्रद इतिवचनादक्षताया एवं नैयमिकं दानम्। पितर त्वकन्यामपि दधादितिकेचित्।)

पूर्व मध्यकाल में विधवा विवाह समाज द्वारा स्वीकृत नहीं था। कभी–कभी विधवा विवाह कुछ परिस्थितियों में किया जा सकता था। राजपूत समाज में तो यह विवाह नहीं के बराबर होते थे।

स्वतंत्रता के पूर्व (खासकर 18वीं शताब्दी के अंत) में नारी की स्थिति अत्यन्त गिरी हुई थी। इन्हें पूरी तरह से पुरुषों के कठोर नियंत्रण में रहना पड़ता था। इनको सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक क्षेत्र में काम करने की स्वतंत्रता तथा घूमने पर प्रतिबंध था। किन्तु खोतिहर, शिल्पी तथा कामदारों के समाज में नारी पुरुषों के समान कृषि, शिल्पकला, मजदूरी आदि के क्षेत्र में स्वतंत्रतापूर्वक काम करती थी, किन्तु उनको भी पुरुषो के अधीन ही काम करना पड़ता था।

हिन्दू समाज में अनेक कुप्रथायें थी, जिनके कारण नारी की दिशा और बदतर होती गई। उदाहरण के लिए बाल विवाह, दहेज, पर्दा–प्रथा, बहु–विवाह प्रथा, विधवा विवाह का न होना, बेमेल विवाह आदि ने नारी की स्थिति को अत्यन्त ही सोचनीय बना दिया था।

मध्यकाल में बाल–विवाह का विशेष प्रचलन हो गया था। हिन्दुओं को यह भय रहता था कि कहीं युवा होने पर हमारी कन्याओं को आक्रमणकारी उठाकर न ले जायें। इस लिए वे बचपन से ही उनका विवाह कर दिया करने थे। इस समय तक प्रायः छः या सात वर्ष की कन्याओं का विवाह कर दिया जाता था। जिसके परिणामस्वरूप कालांतर में नारियों के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा और समाज में बाल विधवाओं की संख्या बढ़ने लगी। चूँकि विधवायें दूसरा विवाह नहीं कर सकती थी, इससे समाज में उनके साथ अत्याचार एवं व्याभिचार में वृद्धि हुई। आगे चलकर यह प्रथा बंगाल में भयंकर रूप धारण कर लिया।

मध्यकालीन राजनीति में राज्य का सर्वोच्च पदाधिकारी सुल्तान होता था। शासन की संपूर्ण प्रभुसत्ता उसमें निहित थी। वह शक्ति का केन्द्र था। सर्वसाधारण उसे समाज का आदर्श मानता था।[33] उसके नाम का फतवा पढ़ा जाता था तथा सिक्कों पर उसका नाम खोदा जाता था। सुल्तान निरंकुशता से शासन करने में अपना गौरव समझते थे यदि उसे राज्य का सर्वोच्च कहा जाये तो अतिश्योक्ति न होगी।[34]

नारी का मनुष्य–जाति की उत्पत्ति में ही नही वरन् समाज निर्माण में भी नारी का बहुत बड़ा योगदान रहा है।[35] एक बेटी, बहन, पत्नी और और माता के रूप में वह अपने कर्त्तव्यों का पालन करती हुई जीवन का उद्देश्य व्यक्त करती है, उसी से सम्पूर्ण मानव जाति के भाग्य का निर्णय होता है।[36]

विधवाओं की स्थिति भी सोचनीय थी। उन्हें सादे वस्त्र, सामान्य भोजन एवं सादा जीवन व्यतीत करना पड़ता था। कहीं–कहीं पर तो उन्हें लोकलाज हेतु जबर्दस्ती सती होने के लिए बाध्य किया जाता था। बंगाल में तो विधवा को अशुभ माना जाता था, उसका दर्शन पाप समझा जाता था। इन्हें कुछ लोग तो धार्मिक स्थानों पर छोड़ आया करते थे। इस प्रकार विधवायें जीवन भर यातनायें सहती रहती थी।

इस समय समाज में बहु–विवाह का प्रचलन था। वास्तव में इन मुख्य तत्वों में से एक तत्व यह भी था जिनके कारण समाज में विधवाओं की संख्या बड़े पैमाने पर बढ़ रही थी। यद्यपि आम लोगों में एक ही विवाह होता था किन्तु राजघरानों, सामंतो, अमीरों, एवं उच्च घरानों में बहु–विवाह प्रचलित था।

हिंदू समाज में इस समय देवदासी प्रथा जोरो पर थी। मंदिरों में अनेक कुँवारी कन्याओं को दान कर दिया जाता था। दक्षिण भारत के राज्यों में इस प्रथा का अधिक प्रचलन था। यहाँ देवदासियों को मंदिर के पुजारियों को प्रसन्न करने के लिए हर कार्य करना होता था। महाराष्ट्र में अनेक मजबूर कन्याओं को मंदिर के लिए समर्पित भावना से काम करना पड़ता था। उन्हें 'मुरालिस' कहा जाता था। जो जीवन भर अविवाहित रहती थी। युवा मुरालिस को व्यावसायिक नर्तकी के रूप में धनी लोगों के शाही खानो, बैठकों, विवाह–उत्सवो पर मनोरंजन के लिए काम करना पड़ता था क्योंकि धनी लोग मंदिरों को भारी धनराशि दान में दिया करते थे। जब इनकी कन्याओं की उम्र ज्यादा हो जाती थी तो उनको अपने जीवन–यापन के लिए अनेको कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था, अर्थात् उनका जीवन यापन नर्क बन जाता था। यह प्रथा उत्तर एवं मध्य भारत में भी अनेकों स्थानों पर प्रचलित हो गयी थी, जहाँ व्यवसायिक नर्तकियों को 'यवीन' कहा जाता था।

भारत में मुस्लिम नारी की स्थिति भी अच्छी नहीं थीं मुसलमानों में बहुपत्नी प्रथा प्रचलित थी। एक मुसलमान चार पत्नियाँ रख सकता था। इसलिए मुस्लिम परिवार में कोई भी नारी गृहस्वामिनी होने का दावा नहीं कर सकती थी, किन्तु फिर भी उनके साथ अच्छा

व्यवहार किया जाता था। मुसलमानों में पर्दा प्रथा का कड़ाई से पालन किया जाता था। उच्च वर्ग की नारियाँ बुक्र पहनकर बाहर निकलती थी।[37] मुसलमानों की नारी को गैर पुरुषों से मिलने–जुलने पर सख्त पाबन्दी थी और निकट संबंधियो तक को उनकी झलक नहीं मिलने देते थे।[38] उच्च घरानों की नारी को कुरान तथा अन्य धर्मग्रंथ पढ़ाये जाते थे।

हिन्दू नारी की अपेक्षा मुस्लिम नारी की आर्थिक दशा अच्छी थी, क्योंकि इस्लामी कानून के अनुसार वे अपने पिता की संपत्ति में हिस्सेदार होती थीं। मुसलमानों में नारी को तलाक देने का भी विधान था। एवं मस्जिद में पुरुषों की भाँति नमाज पढ़ने का अधिकार नहीं था।

ऐसी स्थिति में मानवतावादी ओर समतावादी भावनाओं से प्रेरित होकर मुस्लिम एवं हिन्दू सुधारकों ने नारी की निरंतर गिर रही स्थिति को सुधारने का प्रयास किया। जैसे–

- सर सैयद अहमद खाँ एवं अलीगढ़ आंदोलन द्वारा नारी सुधार के प्रयास
- नारी शिक्षा के प्रयास
- ईश्वरचन्द्र विद्यासागर द्वारा नारी उद्धार के क्षेत्र में प्रयास
- प्रार्थना समाज द्वारा नारी उद्धार के कार्य
- आर्य समाज द्वारा नारी उद्धार के कार्य
- रामकृष्ण मिशन एवं विवेकानंद द्वारा नारी उद्धार के कार्य
- केशवचंद्र सेन द्वारा नारी उद्धार के कार्य
- रवीन्द्रनाथ टैगोर द्वारा नारी की पैरवी
- थियोसोफिकल सोसायटी द्वारा नारी सुधार
- गांधीजी एवं अम्बेडकर द्वारा नारी उद्धार के कार्य
- स्वर्ण कुमारी देवी
- पंडिता रमाबाई
- सरला देवी घोषाल
- मैडमभिकाजी रूस्तमजी कामा
- एनीबेसेंट
- कमला देवी चट्टोपाध्याय
- सरोजिनी नायडू
- अरुणा आसफ अली
- रानी गुड़ियालू
- प्रीतिलता वाडदार

19वीं शताब्दी में सभी समाज सुधारकों का ध्यान नारी शिक्षा और नारी उद्धार की ओर आकर्षित हुआ। अतएव नारी शिक्षा और नारी उद्धार के लिए समय–समय पर अनेक संघ, संस्थाओं और समितियों का गठन किया गया।

जैसे–

- 1876 ई. में नारी शिक्षा के प्रसार के लिए 'सिल्हट यूनियन' कि स्थापना की गई।
- 1877 ई. में बंगाल में 'हितैषिणी सभा' की स्थापना हुई।
- परन्तु नारी उद्धार के लिए संगठित प्रयास 'भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस' की स्थापना 1885 ई. के बाद से प्रारंभ हुआ। कांग्रेस की स्थापना के साथ ही अखिल भारतीय महिला कांग्रेस की स्थापना हुई।
- 1886 ई. में स्वर्ण कुमारी देवी ने 'महिला समुदाय' नामक संस्था की स्थापना की।
- 1887 ई. में शशिपद बनर्जी ने 'विधवाश्रम ' की स्थापना की।
- महाराष्ट्र में नारी शिक्षा का उत्तरदायित्व संभालते हुये ''महाराष्ट्र महिला शिक्षा समिति' गठित की।
- श्रीमती रामबाई के नेतृत्व में 'हिंदू लेडीज सोशल क्लब' की स्थापना की गई।
- 1907 ई. में 'भारतीय स्त्री एसोसियेशन' की स्थापना की गई।
- 1997 ई. में अखिल भारतीय महिला सभा की स्थापना हुई।
- इसके पश्चात भारत के विभिन्न भागों में विधवाश्रमों की स्थापना की गई।

नारी की दशा को सुधारने हेतु विभिन्न प्रांतो में महिला मंडलों की स्थापना की गई। इनमें गुजराती हिंदू स्त्री मंडल, 'सेवासदन' 'महिला समिति' 'भगिणी समाज' 'भारतीय महिला परिषद' आदि संस्थायें विशेष उल्लेखनीय है। इन संस्थाओं ने नारी की दशा सुधारने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

- 1919 के बाद नारियों ने बड़ी संख्या में राजनीति में हिंस्सा लेना प्रारंभ किया।
- 1922 ई. में प्रथम बार नारियों को विधान सभा का सदस्य होने का अधिकार मिला।
- 1935 ई. में डॉ. मधुलक्ष्मी रेड्डी मद्रास प्रांतीय व्यवस्थापिका सभा की सदस्य बनी। इसके बाद नारियां अनेक कौसिंलों संस्थाओं कारपोरेशन और म्युनिसपल्टियों की सदस्य बनीं।
- 1926 ई. में अखिल भारतीय महिला संघ की स्थापना हुई।
- 1927 ई. में वेश्याओं की दशा सुधारने के लिये 'रेसक्यू होग' की स्थापना की गई।
- 1934 ई. के अधिनियम के अनुसार बालिक नारियों में से करीब 10/12 प्रतिशत मत देने का अधिकार मिला।
- मुसलमान नारियों में जागृत उत्पन्न करने के लिये 'अखिल भारतीय मुस्लिम महिला सम्मेलन' की स्थापना हुई।

निष्कर्ष

स्वतंत्रता के पूर्व काल में नारी स्थिति के सुधार हेतु औपनिवेशिक शासन ने भी तत्कालीन समाज सुधारकों के साथ सहयोग करते हुये अनेक कानूनों को मान्यता प्रदान कर संरक्षक दिया। जिससे उनकी स्थिति में कुछ सुधार अवश्य हुआ। इस समय बने कानूनों में प्रमुख निम्न हैं–

- सती प्रथा निषेध कानून (1829)
- शारदा एक्ट (1829)
- बालिका वध निषेध कानून (1895)
- स्त्री शिक्षा को सरकारी प्रोत्साहन (1848)
- ब्राह्य मैरिज एक्ट (1872)
- हिंदू विधवा पुर्नविवाह अधिनियम (1856)
- विवाहित महिला संपत्ति अधिनियम (1874)
- बालविवाह पर प्रतिबंध (1891)
- हिंदू महिला संपत्ति अधिकार कानून (1937)

अनेको समितियों एवं नारी मंडलों ने नारी के अंदर सोई सामाजिक चेतना को जागृत करने का काम किया, जिसके उपरांत अनेकों नारियों ने स्वतंत्रता संग्राम में भाग लिया जिन्होंने हंसते–हंसते अपने प्राणों तक की बाजी लगा दी। भारतीय इतिहास में ऐसी नारियों की लम्बी सूची प्राप्त होती है। जिनके योगदान को संक्षिप्त रूप दिया जा चूका है। औपनिवेशक काल की भारतीय नारी यहां की राजनीतिक क्रियाकलापों से भी अनभिज्ञ नहीं रहीं। इन नारियों का ध्यान राजनीति की तरफ आकुष्ट करने का कार्य थियोसोफिकल सोसायटी की नींव डालने वाली विदेशी नारी सुश्री ब्लावत्सकी, मार्गरेट नोबल–'इंडियन वूमेन ऐसोसियेशन' की संस्थापक श्रीमती मागरिट कंजिस, सरोजनी नायडू आदि ने किया। 1917 में सरोजिनी नायडू में नारियों को एक शिष्टमंडल श्री मांटेस्क्यू सेक्रेटरी आफ स्टेट से मिला और नारी के लिए मताधिकार की मांग की। तब जाकर 1919 में मताधिकार को पूर्ण स्वीकृत प्राप्त हुई। इसके पश्चात 1925 ई. में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की अध्यक्षा सरोजनी नायडू चुनी गई। 1927 ई. में अखिल भारतीय महिला सम्मेलन नाम से गैर राजनीतिक संगठन की स्थापना हुई। 1930 में गांधी जी के नमक सत्याग्रह में अनेक नारियों ने खुलकर भाग लिया। जिनमें कैप्टन लीलावती, हंस मेहता, सरोजिनी नायडू, विजय लक्ष्मींपंडित

आदि प्रमुख थी। तत्पश्चात नारियों ने सरकार के सम्मुख विशेषाधिकार की मांग रखी। 1931 में ब्रिटिश सरकार ने भारतीय राष्ट्रीय के करांची सम्मेलन मे इस विशेषाधिकार एवं प्रतिनिधित्व के पक्ष में प्रस्ताव प्रस्तुत किया। 1935 के अधिनियम के तहत केंद्रीय एवं प्रांतीय विधान मंडलों में भी नारी को समुचित प्रतिनिधित्व दिया गया। जिससे नारी की स्थिति में संतोषजनक सुधार हुआ।

संदर्भ

1. ऋग्वेद 4/18/12, 10/18/7,10/40/2 तथा 8।
2. बौधायन धर्मसूत्र? 2/2/66–68।
3. मनुस्मृति, 5/157–160 पाराशर 4/31।
4. वीरमित्रोदय पृ. 626–627 में उद्धृत।
5. वृद्धहारीत 11/205–210 स्मृति चंद्रिका एक, पृष्ठ 222 तथा शुद्धितत्व पृष्ठ 325 में उद्धृत।
6. हर्षरचित 6, अंतिम अंश।
7. स्कन्दपुराण, काशी खण्ड, 4/55/75।
8. स्कन्दपुराण काशी खंड, अध्याय 4।
9. निरुक्त, 3/15 आपस्तंबमंत्रपाठ, 1/5/9।
10. पी.वी. काणे, धर्मशास्त्र का इतिहास, भाग एक, पृष्ठ 332–333
11. पी.वी. काणे, धर्मशास्त्र काक इतिहास, भाग–एक, पृष्ठ 333 सेक्रेड बुक्स आफ द इस्ट, जिल्दपीस, विनय, पृष्ठ 321।
12. उत्तराध्ययन, सूत्र 33/3, सेक्रेड बुक्स आफ द इस्ट, जिल्द 45,पृष्ठ 116।
13. पी.वी. काणे, धर्मशास्त्र का इतिहास, भाग–एक, पृष्ठ 338।
14. गौतम, 18/4–14।
15. मनुस्मृति, 9/323–53।
16. मनुस्मृति, 9/62।
17. मनुस्मृति, 1/64 एवं 68, याज्ञवल्क्य, 1/69।
18. व्रेस्टरमार्क, हिस्ट्री आफ ह्यूमन मैरिज, 1921 जिल्द तीन पृष्ठ 206–220।
19. निरुक्त, 3/15, मेधातिथि मनुस्मृति, 9/66।
20. विज्ञानेश्वर, याज्ञवल्क्य स्मृति 2/117।
21. नारद, स्त्रीपुन्स, 45।
22. संस्कार प्रकाश, पृष्ठ 740–747।
23. नारद स्त्रीपुन्स प्रकरण, 97, पाराशर 4/30, अग्निपुराण 154/5–6।
24. पाराशर माधवीय, 2, भाग ए, पृष्ठ 53।
25. मेधातिथि, मनुस्मृति 3/10, 5/163।
26. पी.वी. काणे, धर्मशास्त्र का इतिहास, भाग– एक, पृष्ठ 343।
27. हरदत्त मनुस्मृति, 3/174।
28. पी.वी. काणे, धर्मशास्त्र का इतिहास, भाग– एक, पृष्ठ 344।
29. ब्रह्मपुराण अपरार्क पृष्ठ 99 में उद्धत। यदि सा बालविधवा बलात्तयक्ताथवा क्वाचित। तदा भूयस्तु संस्कार्या गृहीता यैन केनचित।
30. नारद, स्त्रीपुंस, 98–101।
31. विश्वरूप, याज्ञवल्क्य 1/63।
32. मिश्रा, अर्चना 2015 – नारी के सामाजिक स्थिति का पुनरावलोकन, विन्ध्य भारती (शोध पत्रिका, अ.प्र.सिं.वि.वि. रीवा, 12(III) पृ. 105–111.
33. मिश्रा, अर्चना 2016 – मध्यकालीन भारत में परम्पराओं में बंधी नारी : प्रादुर्भाव एवं विकास का अध्ययन, International Journal of Advanced Research and Development, ISSN : 2455-4030, Vol. 1 Issues 6, pp. 21-24.
34. मिश्रा, अर्चना 2016 – सती प्रथा एवं जौहर परम्पराओं में झुलसती नारी, International Journal of Multidisciplinary Education and Research, ISSN: 2455-4588, Vol. 1 Issues 3, pp. 66-71.
35. मिश्रा, अर्चना 2015 – भारतीय नारी का राजनैतिक स्वत्व और महिला आरक्षण, विन्ध्य भारती (शोध पत्रिका, अ.प्र.सिं.वि.वि. रीवा, 12(IV) पृ. 98–103.
36. सितंबर 2005 ई. में टेनिस खिलाड़ी सानिया मिर्जा को भी फतवा जारी किया गया है कि वह स्कर्ट पहनकर न खेलें जिसकी देश भर में समालोचना की गई।
37. मिश्रा, अर्चना 2016 – भारत की परम्पराओं : घूंघट आदि विविध सामाजिक परम्पराओं से ग्रस्त नारी, शिक्षा कलश, शोत्र पत्रिका सुल्तानपुर (उ.प्र.), पृ. 41–50. RNI UPBL4/2009/28555 ISSN-0975-2579
38. मिश्रा, अर्चना 2016 – भारत की परम्पराओं : नारी के सामाजिक स्थिति का पुनरावलोकन, International Journal of Humanities and Social Science Research, Volume 2; Issue 8; Page No. 30-36.